Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
ISSN 2320–7175 | Volume 09, Issue 02, July-December 2021
http://swarsindhu-pratibha-spandan-org
© The Author(s) 2021
A UGC CARE listed Journal

लोक संस्कृति के साधक - डॉ. सूरत ठाकुर

BALDEV SINGH[1] & DR. SHRUTI HORA[2]

1 Ph.D. Research Scholar, Panjab University, Chandigarh

2 Associate Professor, Music Instrumental Department, PGGCG, Sector-11, Chandigarh.

सार संक्षेपिका

विश्वभर में अपनी एक अलग पहचान रखने वाले हिमाचल प्रदेश में, हिमाचली लोक संस्कृति के संरक्षण व संवर्धन में यहां के लोक कलाकारों का बहुत बडा़ योगदान रहा है। अपने उत्कृष्ट योगदान और सराहनीय प्रयासों के फलस्वरूप ही यहां के लोक कलाकारों ने हिमाचली लोक संस्कृति को जीवित रखा है। उन्हीं कलाकारों में डॉ. सूरत ठाकुर भी एक ऐसा नाम है, जिन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन हिमाचली लोक संस्कृति के संरक्षण व संवर्धन के लिये समर्पित किया है। संस्कृति के संरक्षण व संवर्धन में इनके द्वारा किए गए उत्कृष्ट योगदन का मूल्यांकन नहीं किया जा सकता है। अपने लेखन के माध्यम से डॉ. सूरत ठाकुर ने लोक संस्कृति का ऐसा कोई भी पहलू नहीं छोड़ा है, जिस पर इन्होंने कार्य न किया हो। दर्जनों पुस्तकें और सैंकड़ों शोध आलेखों के माध्यम से डॉ. सूरत ठाकुर ने न केवल लोक संस्कृति के संरक्षण व संवर्धन में अपनी अहम भूमिका निभाई है बल्कि लोक संस्कृति के संरक्षण व संवर्धन के प्रति भी लोगों को जागरूक किया है। डॉ. सूरत ठाकुर ने सिर्फ एक लेखक के रूप में ही नहीं अपितु एक संगीत अध्यापक के रूप में भी अपने 35 वर्षों के कार्यकाल के दौरान सैंकडों विद्यार्थियों को लोक संस्कृति के प्रति जागरूक किया है। शास्त्रीय संगीत के साथ-साथ इन्होंने विधार्थियों को लोक संगीत की भी शिक्षा दी और उसके प्रति जागरूक भी किया है। डॉ. सूरत ठाकुर के द्वारा किये गये सराहनीय प्रयासों से वर्तमान समय में भी यहां की पुरातन संस्कृति को जानने का अवसर प्राप्त हो रहा है। लोक संस्कृति के लिये डॉ. सूरत ठाकुर द्वारा किया गया योगदान एक अविस्मरणीय कार्य है।

शब्द संकेत- लालहड़ी, लोक भार्था, परम्परा, संवर्द्धन, संरक्षण, रोमांचक, मंजरी, सांगोपांग, गूर, अनुष्ठान, देव प्रांगण, कारकून, नटैइया।

भूमिका

किसी भी समाज का आईना होता है उस क्षेत्र की लोक संस्कृति। संस्कृति में ज्ञान, विश्वास, कला, आदर्श, कानून, प्रथा एवं क्षमताओं का समावेश होता है। डॉ. हरदेव बाहरी ने संस्कृति की परिभाषा देते हुए कहा है कि संस्कृत रूप देने की क्रिया को ही संस्कृति कहते हैं।1 संस्कृति की एक यह भी विशेषता है कि संस्कृति मानव अवश्यकताओं की पूर्ति करती है। संस्कृति मनुष्य को जीने का तरीका सिखाती है। मनुष्य जीवन संस्कृति से पृथक नहीं हो सकता। भारत वर्ष की बात करें तो यह अपनी समृद्ध संस्कृति के लिए पूरे विश्व में पहचाना जाता है। पूरे विश्व में भारत विविधता में एकता की मिसाल प्रस्तुत करता है। भारत वर्ष का ही एक छोटा सा प्राकृतिक सौन्दर्य से भरपूर पहाड़ी राज्य हिमाचल प्रदेश अपनी समृद्ध संस्कृति से लोगों को अपनी ओर आकर्षित करता है। यहां की देव संस्कृति, खान-पान, मेले-त्यौहार, रहन-सहन और लोक संगीत अपने आप में समृद्धता को दर्शाता है।

समय के साथ-साथ हिमाचल प्रदेश के परिवेश में भी परिवर्तन देखने को मिल रहा है। लोग पाश्चात्य संस्कृति की तरफ आकर्षित होते हुए अपनी संस्कृति को भूलते जा रहे हैं, लेकिन ऐसे बहुत से लोक संस्कृति के साधक हैं जिनके प्रयासों की वजह से आज भी हमें अपनी पुरानी संस्कृति को जानने का अवसर प्राप्त हो रहा है। हमारे पूर्वज क्या खाते थे, क्या

पहनते थे, कहां रहते थे और कौन सा लोक संगीत गाते थे। इन सब को जानने-समझने और संरक्षित करने का प्रयास बहुत कम लोग करते हैं। लोक संस्कृति के साधकों की श्रंृखला में डॉ. सूरत ठाकुर एक ऐसा नाम है, जिन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन लोक संस्कृति की सेवा के लिए समर्पित किया है। लोक संस्कृति का ऐसा कोई भी पहलू नहीं है जिसके संरक्षण व संवर्धन में डॉ. सूरत ठाकुर ने अपना उत्कृष्ट योगदान न दिया हो।

जब दिल में कुछ करने की इच्छा हो तो कोई भी काम मुश्किल नहीं होता। 6 जुलाई 1960 को जन्में डॉ. सूरत ठाकुर ने यह कथन सत्य साबित कर दिखाया। जन्म से ही कोई व्यक्ति महान नहीं होता है। शायद ही किसी ने कल्पना तक नहीं की होगी कि कृषक कुटुम्ब में जन्म लेने वाला साधारण सा बालक भविष्य में लोगों की प्रेरणा का स्रोत बनेगा।

हिमाचल प्रदेश के कुल्लू जिले का एक खूबसूरत गांव ’शियाह’ में डॉ. सूरत ठाकुर का जन्म हुआ है, जो अपने प्राकृतिक सौन्दर्य और लोक संस्कृति के लिए विशेष रूप से जाना जाता है। शहरों के शोर-शराबे से मीलों दूर प्रकृति की गोद में भोले-भाले लोगों के मध्य डॉ. सूरत ठाकुर की परवरिश हुई है। जन्म से लेकर ही इन्हें अपने लोक संस्कृति से विशेष लगाव रहा है। बचपन से ही गांव के मेलों में रात-रात भर नाटी नाचना और लोकगीतों को गाना इनका मुख्य शौक रहा है।

जिस परिवेश में इनका जन्म हुआ वह परिवेश देव-संस्कृति से ओत-प्रोत रहा है। इस संस्कृति का इनके जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा और इन्होंने निश्चय कर लिया कि लोक संस्कृति के संरक्षण और संवर्धन में ही काम करना है। प्राथमिक स्कूल से लेकर उच्च विद्यालय तक स्कूल में होने वाले सांस्कृतिक कार्यक्रमों में ये लोकगीत गाकर श्रोताओं को मुग्ध करते थे।

संगीत के प्रति रुचि होने के कारण इन्होंने महाविद्यालय में अन्य विषयों के साथ संगीत विषय को भी चुना। इससे इनकी संगीत सीखने की क्षमता को बढ़ावा मिला। स्नातक के बाद संगीत विषय में स्नातकोतर की शिक्षा हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय शिमला से प्राप्त की। स्नातकोतर की शिक्षा ग्रहण करने के उपरान्त संगीत विषय में ही पीएच.डी. की उपाधि डॉ. इंद्राणी चक्रवर्ती के निर्देशन में प्राप्त की। लोक संगीत में विशेष रुचि होने के कारण इन्होंने ‘चम्बयाली और कुल्लुवी संगीत में सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के आधार पर तुल्नात्मक अध्ययन’ नामक विषय में पीएच.डी की। इनका नाम हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय संगीत विभाग से पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त करने वाले पहले समूह के शोधार्थियों में शामिल हुआ। पीएच.डी. के शोध कार्य के दौरान ही इन्होंने संगीत विषय में अध्यापन का कार्य भी शुरू किया। 35 वर्षों के अपने संगीत अध्यापन के सफर में इन्होंने हजारों विद्यार्थियों का भविष्य उज्जवल किया।

अध्यापन कार्य के साथ-साथ इन्होंने अपना बहुमूल्य योगदान लेखन कार्य में भी देना शुरू किया और लोक संस्कृति के संरक्षण व संवर्धन में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इनका मानना है कि अपनी कला संस्कृति और भाषा को बचाये रखना हर व्यक्ति का कर्तव्य होना चाहिये। हमारी उदासीनता के कारण हमारी बहुत सी सांस्कृतिक परंपराएं आज या तो लुप्त हो गई हैं या लुप्त होने के कगार पर हैं। अतः इन सांस्कृतिक निधियों को पुनर्जीवित करने के प्रयास करने आवश्यक हैं।

अपने लेखन के माध्यम से डॉ. सूरत ठाकुर ने हिमाचली लोक संस्कृति के हरेक पहलू को समाज के समक्ष प्रस्तुत किया है। वर्तमान में डॉ. सूरत ठाकुर द्वारा लिखित 17 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। इसके अतिरिक्त इन्होंने 6 पुस्तकों का

सम्पादन भी किया है। डॉ. सूरत ठाकुर के विभिन्न शोध पत्रिकाओं में सौ से अधिक शोध लेख प्रकाशित हो चुके हैं। सन् 1996 में इनकी पहली पुस्तक 'हिमाचल प्रदेश के लोकवाद्य' प्रकाशित हुई। जिसमें हिमाचल प्रदेश के विभिन्न आंचलों में बजाये जाने वाले लोकवाद्यों का वादनविधि सहित वर्णन किया गया है। डॉ. सूरत ठाकुर का कहना है कि यह पुस्तक सिर्फ उनकी ही नहीं अपितु पूरे हिमाचल प्रदेश की लोक वाद्यों पर लिखी गई पहली पुस्तक है। यह पुस्तक संस्कृति के संरक्षण व संवर्धन की दृष्टि से इतनी सार्थक सिद्ध हुई कि संगीत शोधार्थियों के साथ-साथ आम जन मानस भी इस पुस्तक से इस तरह जुड़ गया कि उनके लिए इस पुस्तक की आपूर्ति कर पाना उस समय असम्भव कार्य बन गया था। वर्तमान समय में भी शोध कार्य की दृष्टि से इस पुस्तक की अहमियत दिन प्रतिदिन बढती जा रही है। इस पुस्तक की लोकप्रियता के कारण राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, संस्कृति मंत्रालय (भारत सरकार) ने 2014 में इसका अंग्रेजी संस्करण प्रकाशित किया। इस पुस्तक के अतिरिक्त लोकसंगीत में इनकी 2004 में संगीत मंजरी प्रकाशित हुई जिसमें स्नातक स्तर के विद्यार्थियों के लिए संगीत शास्त्र का उल्लेख है। 2014 में 'हिमाचल की देव भार्थाएं' नामक पुस्तक प्रकाशित हुई, जिसमें देवी-देवताओं के गूरों द्वारा गेय रूप में गये जाने वाली गाथाओं का विश्लेषण किया गया है। 2015 में प्रकाशित 'हिमाचल प्रदेश का जनजातीय लोक संगीत' नामक पुस्तक में किन्नौर, लाहुल-स्पिति, पांगी-भरमौर के संगीत का सांगोपांग वर्णन किया गया है।

2016 में प्रकाशित पुस्तक 'कुल्लू की देव परम्परा में संगीत' नामक पुस्तक में कुल्लू में देवी-देवताओं के अनुष्ठानों तथा मेले-उत्सवों में गाये जाने वाले लोक भजनों, वाद्ययंत्रों, तथा लोकनृत्यों की विस्तृत व्याख्या की गई है। 2017 में प्रकाशित 'हिमाचल प्रदेश के ऋतुगीत' नाम पुस्तक में हिमाचल प्रदेश में बारह महीनों तथा छः ऋतुओं में गाये जाने वाले लोकगीतों का वर्णन किया गया है। 2018 में 'भारतीय संगीत का इतिहास' तथा 2021 में प्रकाशित हिमाचल प्रदेश के पारम्परिक लोक संगीत' नामक पुस्तक में प्रदेश की विभिन्न परम्पराओं के अवसर पर गाये जाने वाले गीतों का स्वरलिपि सहित उल्लेख किया गया है। ये पुस्तकें संगीत के विद्यार्थियों और शोधार्थियों के लिए बहुत उपयोगी हैं। इसके अतिरिक्त 1996 में पर्यटकों का स्वर्ग देवभूमि कुल्लू, 2001 में हिमाचल की देव संस्कृति, युगद्रष्टा-कर्मयोगीः स्व0 ठाकुर वेद राम, 2007 में हारका (मलाणा की लोक संस्कृति पर आधारित उपन्यास), 2012 में मनाली-ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन, 2014 में हिमाचल के शिखरों में रोमांचक सफर (यात्रा कथा), 2015 में हिमाचल प्रदेश की मनोरंजक लोक कथाएं, 2018 में हिमाचली कहावत कोश, 2020 में ब्यासा की यात्रा कथा आदि पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं।

इसके अतिरिक्त डॉ सूरत ठाकुर ने कुल्लू में नाचे जाने वाले 'लाल्हड़ी' लोकनृत्य को पुनर्जीवित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हिमाचल प्रदेश के कुल्लू जनपद की यह अनूठी नृत्य-गायन कला भी आज समाप्त हो चुकी होती, यदि उसे पुनर्जीवित करने के प्रयास अति पिछड़े गांव में फुहाल के घर जन्मे युवक सूरत ठाकुर ने न किये होते। यह नृत्य-गायन कला विधा थी, कुल्लू का लाहलड़ी लोकनाच।

यह लोकनाच कुल्लू जनपद के दूर-दराज़ के गांवों में गांव की महिलाओं द्वारा देव प्रांगण में किया जाता था। हर वर्ष चैत्र सक्रांति से आरम्भ होकर बैसाख की सक्रांति तक रोज़ शाम का भोजन करने के बाद महिलाएं देव प्रांगण में आकर आधी रात तक इस नृत्य को किया करती थी। शुरू में इस नृत्य में केवल महिलाएं ही नाचती थी। धीरे-धीरे इसमें पुरुष भी शामिल होने लगे।

इस नृत्य में आमने-सामने दो पंक्तियां बनाई जाती हैं। एक पंक्ति में पुरुष तथा दूसरी में महिलाएं होती हैं। पहले महिलाएं एक गीत की पंक्ति गाते हुए और नृत्य करती हुई आगे बढ़ते हुए दूसरी पंक्ति के पास पहुंचती है। फिर पुनः लौटना आरम्भ करती हैं। जब वे लौट रहीं होती हैं तो सामने वाली पंक्ति के नर्तक गीत के उत्तर में गीत गाते हुए उसी तरह उनकी तरफ नाचते हुए उसी क्रम में सरकना आरम्भ करती हैं। इस तरह एक गीत प्रश्न उत्तर की सूरत में कई-कई घंटे तक चलता है। इस प्रक्रिया में कई नए गीत भी रचे जाते थे।

सन 1651 में कुल्लू में भगवान रघुनाथ के आगमन की खुशी में दशहरे का आयोजन आरम्भ हुआ, जिसमें तत्कालीन कुल्लू रियासत के 365 देवी-देवता भाग लेने लगे। प्रत्येक देवी-देवता के साथ देव कारकूनों सहित लगभग 50 से 100 लोग आते थे। जो 7 दिनों तक मेला मैदान में देवताओं के साथ रहते थे। दिन तो देवताओं के विभिन्न अनुष्ठानों में बीत जाता था, परंतु खुले आसमान के नीचे रात काटना मुश्किल हो जाता था। इसलिए रात को काटने और स्वस्थ मनोरंजन के लिए गांवों में युवक-युवतियों द्वारा किया जाने वाला लालहड़ी लोकनाच शुरू किया गया। यह नाच देवताओं की पालकियों के सामने रात-रात भर किया जाने लगा। बाद में परंपरा स्थायी हो गई। ढोल, नगाड़ों की थाप और करनाहल, शहनाई की स्वर लहरी के साथ लालहडी गीत पूरी रात मेला मैदान गूंजने लगे।

परंतु स्वतंत्रता के बाद गांवों तक यातायात की सुविधा पहुंचने से तथा मनोरंजन के दूसरे साधन उपलब्ध होने पर दशहरे की रातों में किये जाने वाला यह नाच बंद हो गया। गत 50 वर्षों से गांवों में भी इस लोकनाच को करने की परंपरा समाप्त हो गई। डॉ. सूरत ठाकुर जब संगीत विषय में स्नातकोत्तर करने के बाद हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय शिमला से 'चम्बयाली और कुल्लुई संगीत की सांस्कृतिक पृष्टभूमि के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन' नामक विषय पर शोध कर रहे थे, तो इन्हें इस लोकनाच के लुप्त होने का आभास हुआ, बस तभी से इन्होंने ठान लिया कि इस लोकनाच को पुनर्जीवित करना है। कार्य कठिन अवश्य था, परंतु नामुमकिन नहीं था। इसके लिये उन गांवों की खाक छानी। गांव की बूढ़ी औरतों और पुरुषों से जानकारी जुटाई। फिर उन्हीं गीतों और नृत्य की पद्गति को उनसे सीखा। गीतों की धुनों को स्मरण किया। संगीत के विद्यार्थी तो थे ही, इसलिये धुनों को सीखने में कोई मुश्किल नहीं हुई। तत्पश्चात गांवों के युवा और युवतियों को एकत्र करके चैत्र मास की रातों में सिखाया। एक गांव से दूसरे और फिर तीसरे। इस तरह अधिकांश गांवों में सिखाने के बाद उनकी प्रतियोगिताएं आयोजित करवाई। 8-10 वर्षों के संघर्ष के बाद लालहडी लोकनाच की परंपरा पुनः कायम हुई।

अभी इनका उद्देश्य पूरा नहीं हुआ था। इनकी नज़र कुल्लू दशहरे की रातों में बंद हुए लालहडी लोकनाच को पुनः आरम्भ करवाने की थी। कुल्लू दशहरे का संचालन दशहरा उत्सव समिति करती थी, जिसके अध्यक्ष सरकार में जिले का मंत्री होता है और जिला दंडाधिकारी इसका उपाध्यक्ष होता है। इस बाबत उनसे बात की, परंतु उनके ठंडे व्यवहार के कारण योजना सफल होती हुई नहीं दिखी। उसी बीच कुल्लू जनपद के कुछ उत्साही कर्मचारियों ने कुल्लू कर्मचारी कल्याण संघ की स्थापना की। ये भी उसके सदस्य बन गये। इन्होंने वहां अपनी बात रखी। उन्होंने इनकी बात का समर्थन किया और सन 2001 में कुल्लू दशहरे में 7 दिनों तक चलने वाले उत्सव में छट्टी रात को लालहडी लोकनाच का आयोजन करवाया। नृत्य की अगुआई स्वयं सूरत ठाकुर ने की। पहली बार इसमें 351 लोगों ने भाग लिया। नृत्य रात 2 बजे तक चलता रहा। इससे उत्साहित होकर हर वर्ष इसे करवाना आरम्भ कर दिया। जिसमें नाचने वालो की संख्या

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
ISSN 2320–7175 | Volume 09, Issue 02, July-December 2021
http://swarsindhu-pratibha-spandan-org
© The Author(s) 2021
A UGC CARE listed Journal

निरंतर बढ़ती गई। अंततः सन 2010 में दशहरा उत्सव समिति ने इस लोकनाच के महत्व को समझा, उन्होंने इसमें सहयोग देना शुरू किया।

सन 2014 में कुल्लू में इन्होंने ज़िला मजिस्ट्रेट से इस नृत्य को राष्ट्रीय पहचान दिलाने का आग्रह किया। उन्होंने योजना बनाने को कहा। इन्होंने अपने सहयोगी कलाकारों के साथ विस्तृत योजना बनवाई, और परिणामस्वरूप सन 2014 के कुल्लू दशहरे में सूरत ठाकुर के नेतृत्व (अगुआई) में 6552 महिला-पुरुषों ने एक साथ पारंपरिक लालहडी गीतों के गायन के साथ दो घंटे तक नृत्य किया। जिसे लिम्का बुक ऑफ वल्ड रिकॉर्ड में दर्ज किया गया। इनके कदम यहीं नहीं रुके, बल्कि अगले वर्ष के लिए इसी नाच को गिनीज़ बुक में दर्ज करवाने की तैयारी आरम्भ की। इसके लिये लालहडी लोकगीतों को रिकॉर्ड करवाया, नृत्य की पदगति की वीडियो बनवाकर गांव-गांव तक पहुंचाया गया।

फलतः सन 2015 के दशहरे में 9892 स्त्री-पुरुषों ने इस नाच में भाग लिया। गिनीज़ बुक ऑफ रिकॉर्ड की टीम भी बुलाई गई। नृत्य डेढ़ घंटे तक चला। इसमें किसी भी कलाकार को न तो पारिश्रमिक दिया गया, न कोई दूसरी सुविधा प्रदान की गई। सभी लोग स्वयं सेवी भावना से इसमें शामिल हुए। इसका निर्देशन और नेतृत्व डॉ सूरत ठाकुर ने स्वयं किया। दशहरा उत्सव समिति के सहयोग से मेहनत रंग लाई। मेहनत का फल तो मिलना ही था। अतः यह नाच कुल्लू नाटी के नाम से गिनीज़ बुक ऑफ वल्ड रिकॉर्ड में शामिल हो गया। सरकार ने भी घोषणा की कि यह आयोजन हर वर्ष होगा, जिसमें दशहरा उत्सव समिति

पूरा सहयोग देगी।[2] यह नृत्य तब से हर वर्ष दशहरा में दो बार किया जाता है, जिसका निर्देशन और नेतृत्व डॉ सूरत ठाकुर कर रहे हैं। अब यह लोकनाच चैत्र मास की रातों के अतिरिक्त गांवों के मेलों में भी किया जाने लगा है।

डॉ. सूरत ठाकुर ने लोक संस्कृति और लोक संगीत का ऐसा कोई भी पहलू नहीं छोडा है जिस पर उन्होने लेखन का कार्य न किया हो। यहां की वेष-भूषा, खान-पान, रहन-सहन, और यहां के लोक संगीत को लिपिबद्ध करके डॉ. सूरत ठाकुर ने भविष्य के लिए सुरक्षित करने का सराहनीय कार्य किया है। लेखन के साथ-साथ डॉ. सूरत ठाकुर ने अपने गायन और लोक नृत्य के द्वारा भी यहां की लोक संस्कृति को संरक्षण देने का उत्कृष्ट कार्य किया है। डॉ. सूरत ठाकुर की कुल्लवी लोक नृत्य ’नाटी’ में इतनी अधिक रूचि है कि जहां भी ’नाटी’ का आयोजन हो रहा हो वहां सूरत ठाकुर मौजूद रहते हैं, ये अपने आप को नाटी में शामिल किए बिना नहीं रह सकते। सूरत ठाकुर नाटी के इतने नटईया (नाटी नाचने वाला) है कि इन्होंने बहुत सारे नर्तक दलों को समय-समय पर इसका प्रशिक्षण भी दिया है।

वर्तमान में भी डॉ. सूरत ठाकुर अपने लेखन, गायन, और लोक नृत्यों के माध्यम से लोक संस्कृति के संरक्षण व संवर्धन के कार्यों में अपना बहुमूल्य योगदान दे रहे हैं और लोगों को भी इस क्षेत्र में आने के लिए प्रेरित करते रहते हैं। सेवानिवृति के बाद ये ‘हिमालय धरोहर’ नामक यू ट्यूब चैनल के माध्यम से हिमाचल की लोक संस्कृति और लोकसंगीत पर 50 से अधिक वृतचित्र बना कर प्रसारित कर चुके हैं। इनका कहना है कि जब तक सांस रहेगी ये लोक संगीत को समाज के सामने लाने का काम करते रहेंगे।

उपसंहार

देव संस्कृति से ओत-प्रोत कुल्लू जिला में जन्में डॉ. सूरत ठाकुर के व्यक्तित्व का अध्ययन करने से हमे ज्ञात होता है कि यहां की संस्कृति के संरक्षण व संवर्धन में इनके द्वारा किए गए उत्कृष्ट योगदन का मूल्यांकन नहीं किया जा सकता है। डॉ.

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
ISSN 2320–7175 | Volume 09, Issue 02, July-December 2021
http://swarsindhu-pratibha-spandan-org
© The Author(s) 2021
A UGC CARE listed Journal

सूरत ठाकुर ने सिर्फ एक लेखक के रूप में ही नहीं अपितु एक संगीत अध्यापक के रूप में भी अपने 35 वर्षों के कार्यकाल के दौरान सैंकडों विद्यार्थियों को लोक संस्कृति के प्रति जागरूक किया। लोक सम्पर्क अधिकारी कुलदीप गुलेरिया, डॉ. विद्या सागर, लोक गायक चन्द्रमणी और लोक गायक नरेश ठाकुर आदि विद्वान इसका उदाहरण हैं। हिमाचली लोक संस्कृति मे डॉ. सूरत ठाकुर का योगदान अविस्मरणीय है और हमेशा लोगों को इस क्षेत्र में काम करने के लिए प्रोत्साहित करता रहेगा।

संदर्भ

डॉ हरदेव बाहरी- राजपाल संक्षिप्त हिन्दी शब्दकोश, संस्करण - 2011 प्र10 435
साक्षात्कार - डॉ. सरत ठाकुर